International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
ISSN: 2455-2070
Received: 03-10-2022; Accepted: 19-11-2022; Published: 05-12-2022
Volume 8, Issue 6, 2022, Page No. 97-98

भारतीय राष्ट्रवाद की उत्पत्ति, प्रक्रिया, विकास विश्लेषणात्मक अध्ययन

विशाल
स्नात्तकोत्तर, इतिहास, UGC NET, महर्षि दयान्नद विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत

सारांश
ब्रिटिश शासन ने भारत में एक नवीन राजनीतिक चेतना, राष्ट्रीयता के विचार और राजनीतिक अधिकारों को जन्म दिया। ब्रिटिश शासन के तहत विभिन्न प्रकार के शोषण का सामना करने और एंग्लो इंडियंस के प्रत्यक्ष नस्लवादी रवैये के कारण भारतीयों ने विदेशी शासन के विरूद्र आवाज उठाने की आवश्यकता को महसूस किया। पाश्चात्य शिक्षा के लाभार्थी भारतीय बुद्धिजीवि वर्ग ने ब्रिटिश शासन के शोषणकारी चरित्र को बेनकाब करने में और जनमत को एक छत्रि के नीचे लामबंद करने में मुख्य भूमिका निभाई। पहले विभिन्न प्रांतो के लोगों ने उनके हितों के बचाव के लिए अपने–अपने एसोसिएशन बनाए जिनसे कांग्रेस के निर्माण का राजा तैयार हुआ। प्रारंभिक कांग्रेसी नेताओं ने ब्रिटिश शासन के तहत् भारत में हो रहे रूपांतरण को भाप लिया था तथा उन्होनें ब्रिटिश के प्रभाव से उत्पन्न स्थितियों का फायदा उठाते हुए एक भारतीय सगठित जनमत का निर्माण करने का प्रयास किया। इतिहासकारों ने भारतीय राष्ट्रवाद की बुनियादों को विभिन्न दृष्टिकोणों से विश्षवित किया परन्तु तथ्य यह है कि इसके संकीर्ण सामाजिक आधार तथा सीमिन दृष्टिकोण के बावजूद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना ने राष्ट्रीयता के लिए नवीन लोकतांत्रिक राजनीतिक आंदोलन की यात्रा के चिन्ह छोड़े।

मूल शब्द: राष्ट्रवाद, समुदाय, औपनिवेशिक, क्रांति, प्रतिक्रिया, पाश्चात्य शिक्षा

प्रस्तावना
राष्ट्रवाद लोगों का ऐसा समुदाय है जो व्यक्ति किसी विशिष्ट क्षेत्र में निवास करते हैं, जिनका आपस में जुड़ाव होता है तथा जो एक समान ऐतिहासिक कारक की उपज होते हैं। राष्ट्रवाद मौलिक रूप से यूरीपीय अवधारणा है जोकि फ्रांसि क्रांति की देन है। भारत में राष्ट्रवाद औपनिवेशिक सरकार की प्रतिक्रिया के रूप में उभरकर सामने आया। 1857 का महान विद्रोह ब्रिटिश शासन के विरूद्व जनअसंतोष की पराकाष्ठा के रूप में और ब्रिटिश शासन के विरूद्व लंबे चलने वाले संघर्ष की शुरूआत माना गया। बंगाल, बम्बई और मद्रास सूबों का पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त बुद्धिजीवि वर्ग औपनिवेशिक शासन के शोषक चरित्र का आलोचक बन गया। प्रांतीय राजनीतिक संगठनों को आकार देने की पहल समाज के इसी संभ्रांत वर्ग से हुई। राजनीतिक जागृति की प्रक्रिया ने 19 वीं सदी के उत्तरार्द्व में एक निश्चित आकार लिया।

लोकप्रिय विद्रोह की विरासत
ब्रिटिश शासन का मुख्य लक्ष्य था ब्रिटेन के हितों को प्रसारित और सुरक्षित रखना। भारत में इस मिशन को पूर्ण करने के लिए ब्रिटिश सरकार द्वारा आर्थिक, राजनीतिक, और सामाजिक क्षेत्रों में विभिन्न नीतियों को लागू किये जाने से ब्रिटिश शासन के विरूद्व असंतोष और अखिल भारतीय राष्ट्रवाद के विचार का जन्म हुआ। ब्रिटिश शासन के प्रारंभिक 100 वर्षो में भारत के संसाधनों की लुट की वजह से भारत में बड़े अकाल पड़े ये आकाल प्राकृतिक न होकर ब्रिटिशों द्वारा अपनाई गई मानवीय नीतियों का परिणाम था। ब्रिटिश औपनिवेशक शोषण के विरूद्व आरंभिक प्रतिरोध पुर्नस्थापनात्मक जनजातीय एंव किसान आंदोलन के रूप में अभियान हुआ इसे आध–राष्ट्रवादी (चतवजव.छंजपवदंप) की संज्ञा दी जा सकती है। इन विद्रोह के रूप में 1760 में बंगाल में सन्यासी व फकीर विद्रोह से लेकर 1850 के भागलपुर राजमहल क्षेत्र के संथाल विद्रोह तक का वर्णन कर सकते है।

1857 के महान विद्रोह को सत्ताच्युत राजाओं और असंतुष्ट सैनिकों तथा पीड़ित किसानों के संचित विस्फोट के रूप में देखा जा सकता है। 1857 में ब्रिटिश शासन की स्थापना के साथ ही भारत के विभिन्न सामाजिक समूहों का शोषण आरंभ हुआ और इन समूहों ने अपने ढंग से प्रतिक्रिया दिखाई और ये समूह ब्रिटिश शासन को अपने ढंग से चुनौती दे रहे थे। परन्तु यकीनन 1857 का महाविद्रोह अपने भौगोलिक प्रसार, तीव्रता, सामाजिक भागेदारी एंव प्रभाव में कहीं बढ़–चढ़कर था। प्रत्येक पीढ़ी के इतिहासकार अपने ढंग से इस महान विद्रोह का मूल्यांकन करते हैं। ब्रिटिश इस विद्रोह को दबाने में तो सफल हो गए किंतु इस विद्रोह को एक ऐसी राष्ट्रीय भावना कि शक्तिशाली अभिव्यक्ति के निर्माण में सफलता प्राप्त की, जिसे आगे चलकर संगठित रूप दिया गया। शोषण के विरूद्ध प्रतिरोध की भावना 1857 के बाद भी जारी रही तथा बंगाल में 1859–60 में नील की उगाही की दमनकारी प्रक्रिया कि विरूद्ध किसानो का विरोध बड़े विद्रोह के रूप में तब्दील हो गया। दीनबंधु मित्र द्वारा लिखित नीलदर्पण निलहो के दमन को चित्रित करता है। इसके अलावा बयान खेती, फसलों एवं पशुओं की जब्त ने दमन के विरूद्ध आवाज उठाने के लिए किसानों को मजबूर कर दिया था जिससे 19वीं सदी के उत्तरार्द्व में बंगाल में भारी मात्रा में किसान विद्रोह हुए। 1873 में किसानो ने पूर्वी बंगाल के पबना जिले में एक कृषक संघ आयोजित किया तथा किसानों को जमींदारो को कर न देने के लिए संगठित किया। किसानों के असंतोष के फलस्वरूप सरकार ने जमीदारों के हितों की रक्षा के लिए 1885 में बंगाल जोतदारी अधिनियम लागू किया। बंगाल में नवीन बुद्धिजीवी वर्ग का प्रतिनिधित्व वैकिमचंद्र चटर्जी, आर सी दत्त, सुरेद्रंनाथ बनर्जी आदि कर रहे थे इन्होनें जोतदारों का समर्थन किया। विभिन्न लोकप्रिय विद्रोहों ने ब्रिटिश सत्ता के विरूद्ध नयी राजनीतिक चेतना के विकास की जमीन तैयार की।

बौद्धिक जागरण
यह दूसरा चरण आधुनिक राष्ट्रवाद के रूप में विकसित हुआ। इसमें पाश्चात्य विचार–धारा और संस्थाओं का प्रभाव भी देखा जा सकता है। सर्वप्रथम अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त बुद्धिजीवि पाश्चात्य विचारधारा के संपर्क में आए और उन्होनें आधुनिक राष्ट्रवाद जैसी विचारधारा को प्रोत्साहन दिया जो समय के साथ प्रगति करता रहा, इसे सर्वप्रथम 19 वीं सदी के समाज एवं धर्म सुधार

आंदोलन के रूप में देखने हैं। यह आधुनिक राष्ट्रवाद की अवधारणा मुट्ठी भर बुद्धिजीवियों तक ही सीमित थी तथा अभिजात्य एवं जनसामान्य के बीच एक प्रकार की दुरी बनी हुई थी, परन्तु राष्ट्रीय आंदोलन के मध्य धीरे–धीरे घटने लगी। बौदिक जागरूकता आने के पीछे ब्रिटिश सरकार का प्राच्यवादि भाषाओं को छोडकर अंग्रेजी भाषा को अधिकारिक भाषा बनाना भी मुख्य कारण रहा जिससे भारतीय बुद्धिजीवि यूरोप के नवीन साहित्य को पढ़ने के सक्षम हुए व पूंजीवाद, लोकतंत्र जैसी अवधारणाओं से परिचित हुए।

इन भारतीय बुद्धिजीविओं के द्वारा अपनी देशी प्रेस की शुरूआत की गई जिसमें से सुधारक भारतीय मुदों को उठाते थे एंव अंग्रेजी सरकार की गतिवियों को उजागर करते थे। इनके द्वारा सम्पादन किए गए। समाचार पत्रों ने भारतीय जनता ग्रामीण एंव शहरी में जागरूकता फैलाने का काम किया। आगे चलकर कई प्रकार के राजनीतिक संगठनों के उद्य से राजनीतिक चेतना का अरूणोदय स्पष्ट हो गया।

प्रांतीय राजनीतिमक संगठन

ब्रिटिश सरकार के सामने भारतीयों की मांगो के रखने के उदेश्य से बने राजनीतिक संगठनों की स्थापना से भारत में एक नई राजनीतिक चेतना की शुरूआत हुई। नव विकसिन बुद्धिजीवियों ने इन संगठनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

1870 के दशक तक ब्रिटिश शासन द्वारा पैदा किए गए दुर्भिक्षों की वजह से ब्रिटिश सरकार में भारतीय बुद्धिजीव वर्ग का विश्वास हिल गया। ब्रिटिश शासन द्वारा भारत के आर्थिक शोषण की दादाभाई नारोजी और रमेश चंद्र दत्त ने कड़ी आलोचना की। प्रांतीय राजनीतिक संगठनों की कड़ी में कलकता में 1851 में ब्रिटिश इंड़ियन एसोसिऐशन की स्थापना की गई।

बंगाल, बिहार, उड़िसा के जमीदारों द्वारा स्थापित यह संगठन राजनीतिक कारणो के लिए लोगों को एकत्रित करने के उदेश्य से स्थापित आरंभिक लोक संगठन था। ब्रिटिश इंडियन एसोलिएशन से पहले कलकता में लंडहोल्डर्स सोसायटी और बंगाल ब्रिटिश इंड़ियन सोसायटी जैसे संगठन थे। ब्रिटिश पार्लियामेंट में भारतीयों की हितों की रक्षा करने के लिए अपील करने के उदेश्य हेतु मुंबई में बांबे एसोसिएशन (1852) और क्षेत्रीयता के बंधनो का अतिक्रमण करते हुए, ये ऐसोसिएशन उपमहाद्वीप में राजनीतिक क्रांति का पहला हस्ताक्षर थे।[1]

ये राजनीतिक संगठन राजनीतिक जागरण की प्रक्रिया की शुरूआत का आधार बने तथा इन्होनें राजनीतिक गतिविधियों को गति प्रदान की। इन संद्यो ने शक्तिशाली ब्रिटिश शासकों के समय राजनीतिक विरोध आयोजित करने का आत्मविश्वास पैदा किया।

ब्रिटिश प्रशासनिक कारवाई

ब्रिटिश शासन के विरूद्ध भारतीयों में आई नयी राजनीतिक चेतना एवं ब्रिटिश सरकार के दमन के विरूद्ध उठे लोकप्रिय विद्रोह इन सबने ब्रिटिश शासकों की ब्रिटिश विरोधीमत को रोकने के लिए प्रशासनिक तंत्र के बारे में सोचने हेतु मजबूर किया। अंग्रेजी और अन्य देशज भाषाओं के भारतीय प्रेस ने 1860 से 1885 के कालखंड में भारतीयों में राजनीतिक चेतना जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारतीय प्रेस द्वारा ब्रिटिश विरोधी प्रचार प्रसार को रोकने के लिए तत्कालीन वायसराय लार्ड लिटिन ने 1878 में वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट लागू कर दिया। इसके बाद आर्म्स एक्ट लागू कर दिया गया। इसके पश्चात् लार्ड रिपन के काल में इल्बर्ट बिल को लेकर विवाद हुआ एक तरह से सब कार्य नस्लीय भेदभाव से संबंधित थे जिससे भारतीय जनमानस एकजुट हो सका। अनिलसील ने अपनी पुस्तक दी इमरजेंस ऑफ इंडियन नेशनलइज्म में यह वर्णन किया है कि 1870 (पृष्ठ 146–47) में बताया है कि पीछले 20 वर्षो में राष्ट्रवाद बढ़ा है।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना

कांग्रेस की रथापना से पूर्व राष्ट्रीय रूप से प्रतिनिधित्व करने वाला कोई संगठन नही था इसलिए भारतीय बुद्धिजीवियों को ऐसे संगठन की कमी महसूस हुई जो सम्पूर्ण भारत का प्रतिनिधित्व करे, इसी उदेश्य से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का गंठन किया गया। शुरूआती दिनों में कांग्रेस की प्रमुख माँगे केंद्रीय और प्रांतीय विद्यायी संघो में सुधार और उनमें भारतीयों को अधिक शक्तियाँ दिया जाना ऊपरी दर्जे के प्रशासन का भारतीयकरण, न्यायिक सुधार युद्ध पर कम से कम खर्च किया जाना किंतु उनकी किसी भी मांग में जनसमर्थन से जुड़ाव नहीं था। 1885 से 1905 के उदारवादी दौर में प्रत्यक्ष राजनीतिक आंदोलन एजेड़े में शामिल नहीं था, इनका ध्यान याचिकाएं, भाषण और आलेख लिखने में था। उगराष्ट्रवादियों ने कांग्रेस को भारत के जनसामान्य व्यक्तियों से जोड़ने का कार्य किया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना ने सामान्यतः भारत में संगठित राष्ट्रवाद की पहली अभिव्यक्ति और राष्ट्रीय राजनीतिक समुदाय के आरंभ के रूप में माना गया।

कांग्रेस के तहत राष्ट्रीय आंदोलन ने 'एक स्पष्ट उपनिवेश विचारधारा' विकसित की। उपनिवेशवाद के विरूध एक सांझा संघर्ष ने राष्ट्रवाद की भावना को उन्नत बनाया और बुद्धिजीवि वर्ग ने 'जनता की अंतर्निहित, स्वभाविक आरम्भ होती हुई चेतना' को जगाया। कांग्रेस की स्थापना 'राजनितिक जागरण कि प्रक्रिया की पराकष्ठा' के रूप में देखी जाती है 'जिसकी शुरूआत 1860–70 में हुई और आगे चलकर 1870 के अवसान तथा 1880 के प्रारंभ में एक लंबी छलांग लगाई।'

अपने वैचारिक अभिविन्यासों के आधार पर इतिहासकारों ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना और भारतीय राष्ट्रवाद के प्रारंभ को विश्लेषित किया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के झंड़े तले उपनिवेशवाद से लड़ने के लिए साझे राजनीतिक मंच पर क्षेत्र स्तर पर बढ़ती राजनीतिक चेतना के उद्य को राष्ट्रीय स्तर पर संगठित राजनीतिक आंदोलन के प्रारंभ के रूप में देखा जा सकता है। काग्रेस ने भारत ब्रिटिश शासन की विभिन्न समालोचनाओं के लिए एक मंच प्रदान किया। इसके प्रारंभिक वर्षो में शिक्षित मध्य वर्ग तक इसकी सदस्यता सीमित होने पर भी दुसरों द्वारा इसकी उपस्थिति महसूस की गई, विशेषतः इसका आर्थिक और राजनीतिक ऐजेड़ा।

संदर्भ सूची

1. बिपिन चंद्रा, इंडियान स्ट्रगल फार इंडिपेंडेस वाइकिंग, नई, दिल्ली, 1988।
2. अनिल सील, दि इमर्जेंस ऑफ इंडियन नेशनलइजमः काम्पीटिश्ज्ञन एण्ड कोलोबरेशन इन दि लेटर नाइनटिन्थ सेंचुरी, कैम्ब्रिाज : कैम्ब्रिाज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1968।
3. शेखर बंधोपाध्याय, फ्राम प्लासी टू पार्टिशन : ए हिस्ट्री आफ मार्डन इंडिया, ओरिएंट लोगमैन, न्यू दिल्ली 2004।
4. जॉन आर मैकयेन, दि पॉलिटिक्ल अवेकनिंग इन इंडिया।
5. जॉन आर मैकयेन, इण्डियन नेशनलइजम एंड दी अ..... कांग्रेस, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस 1977।
6. विपिन्न चंद्रा, दि राइज एण्ड ग्रांथ ऑफ इकॉनामिक नेशनलइज्म इन इंडिया दिल्ली, पीपुल पब्लिशिंग हाऊस, 1966
7. सी. ए. बेली, दि लोकल रूटस ऑफ पॉलिटिक्स, इलाबाद, 1800–1920, ऑक्सफोर्ड, कलैरेन्डन प्रेस, 1975